गांधीवादी क्रान्ति क्या है? समाज के जिन वर्गों के पास विद्यावल, वाहुवल अथवा अर्थवल अधिक है, वे अपने को किसी भी प्रकार के वल का 'स्वामी नहीं' समझें, वरन् अपने को वल का केवल 'ट्रस्टी' मानें तथा वल का उपयोग केवल समाज के सामूहिक हित में ही करें। समाज-व्यवस्था में इतने वडे परिवर्तन को गांधी हृदयपरिवर्तन के द्वारा उपस्थित करना चाहते थे। रामपुरिया ने अभी तक इस हृदयपरिवर्तन पर ही अधिक से अधिक लिखा है।

गाधीवादी क्रान्ति की यह विशिष्टता है कि जो कुछ पुरातन है, उस सबके प्रति विद्रोह की कल्पना उसमें नहीं आती। समय की कसौटी पर जो कुछ खरा और इसलिए उपयोगी प्रमाणित हो चुका है, उसके प्रति किसी भी गांधीवादी का अपनत्व ही हो सकता है। उसका विद्रोह पुरानी परम्पराओं में स्थान पाये हुए केवल उन्हीं तत्वों के प्रति है, जो वर्तमान समय में अपनी उपयोगिता सामाजिक हित की दृष्टि से खो चुके हैं। तथाकथित 'नये' साहित्यकार जो कुछ पुरातन है, उस सबके प्रति असन्तुष्ट हैं। उनका असन्तोष केवल एक 'पुरातन' चीज के प्रति नहीं है। वह है 'पुरातन अर्थव्यवस्था' जिसमें एक पुर्जे के रूप में 'फिट' हो जाने को वे आतुर हैं। गांधीवादी और मार्क्सवादी, दोनों ही पुरातन अर्थव्यवस्था में परिवर्तन चाहते हैं एवं इस परिवर्तन की आवश्यकता के प्रति रामपुरिया उदासीन नहीं हैं, जो उनके 'श्रमवन्दन' काव्यसंग्रह से स्पष्ट है।

माणकचन्द रामपुरिया के सामने कोई धर्म संकट नहीं। उन्होंने आरम्भ से ही अपने को गांधी की शरण में रखा है। अपनी काव्य यात्रा में उन्होंने अपने को कभी 'नया' साहित्यकार बनाने के चक्कर में नहीं डाला, क्योंकि कभी

गांधीवादी क्रान्ति क्या है ? समाज के जिन वर्गों के पास विद्यावल, बाहुवल अथवा अर्थवल अधिक है, वे अपने को किसी भी प्रकार के वल का 'स्वामी नहीं' समझें, वरन् अपने को वल का केवल 'ट्रस्टी' मानें तथा वल का उपयोग केवल समाज के सामूहिक हित में ही करें। समाज-व्यवस्था में इतने वडे परिवर्तन को गांधी हृदयपरिवर्तन के द्वारा उपस्थित करना चाहते थे। रामपुरिया ने अभी तक इस हृदयपरिवर्तन पर ही अधिक से अधिक लिखा है।

गाधीवादी क्रान्ति की यह विशिष्टता है कि जो कुछ पुरातन है, उस सवके प्रति विद्रोह की कल्पना उसमें नहीं आती। समय की कसौटी पर जो कुछ खरा और इसलिए उपयोगी प्रमाणित हो चुका है, उसके प्रति किसी भी गांधीवादी का अपनत्व ही हो सकता है। उसका विद्रोह पुरानी परम्पराओं में स्थान पाये हुए केवल उन्हीं तत्वों के प्रति है, जो वर्तमान समय में अपनी उपयोगिता सामाजिक हित की दृष्टि से खो चुके हैं। तथाकथित 'नये' साहित्यकार जो कुछ पुरातन है, उस सबके प्रति असन्तुष्ट हैं। उनका असन्तोष केवल एक 'पुरातन' चीज के प्रति नहीं है। वह है 'पुरातन अर्थव्यवस्था' जिसमें एक पुर्जे के रूप में 'फिट' हो जाने को वे आतुर हैं। गांधीवादी और मार्क्सवादी, दोनों ही पुरातन अर्थव्यवस्था में परिवर्तन चाहते हैं एवं इस परिवर्तन की आवश्यकता के प्रति रामपुरिया उदासीन नहीं हैं, जो उनके 'श्रमवन्दन' काव्यसंग्रह से स्पष्ट है।

माणकचन्द रामपुरिया के सामने कोई धर्म संकट नहीं। उन्होंने आरम्भ से ही अपने को गांधी की शरण में रखा है। अपनी काव्य यात्रा में उन्होंने अपने को कभी 'नया' साहित्यकार वनाने के चक्कर में नहीं डाला, क्योंकि कभी

वर्तमान युग की विभीषिकाओं से पीड़ित मनुष्य को एक सन्देश : मधुज्वाल

हो सकता है, मनुष्य आज की सभ्यता की चपेट में आकर बिलकुल निर्बल हो गया हो, बिलकुल असमर्थ दीखता हो, बिलकुल दया का पात्र बन गया हो, लेकिन उसमें सभ्यताएँ मिटाने और नवीन सभ्यताएँ गढ़ने की जो महान शक्ति है, उस पर भरोसा किस प्रकार छोड़ा जा सकता है? हो सकता है, वर्तमान सभ्यता की आग में मनुष्य बुरी तरह जलता हुआ दिखायी दे रहा हो, वस्तुतः बुरी तरह जल भी रहा है, लेकिन इस स्थिति से निराश होना आवश्यक नहीं। उसे सहारा देने की आवश्यकता है, उसमें आत्मविश्वास उत्पन्न करने की आवश्यकता है, उसे स्नेह के साथ उसकी क्षमता का स्मरण दिलाने की आवश्यकता है। वह स्वयं उस आग को बुझा सकता है, जिसमें वह झुलसता दीख रहा है, जिसमें वह जल रहा है। प्रश्न यह है कि उसे सहारा कौन दे, उसमें आत्मविश्वास कौन उत्पन्न करे, उसे उसकी क्षमता का स्मरण कौन दिलाये? 'मधुज्वाल' को पढ़ने से सहज ही स्पष्ट हो जाता है कि इन प्रश्न का ही उत्तर देने का प्रयत्न इस काव्य-संग्रह के कवि ने किया है। उसकी अभिलाषा है कि—

मनु-पुत्र तिमिर को भेद बढ़े
ऊषा के ज्योतित प्रांगण में,

वर्तमान युग की विभीषिकाओं से पीड़ित मनुष्य को एक सन्देश : मधुज्वाल

हो सकता है, मनुष्य आज की सभ्यता की चपेट में आकर बिलकुल निर्बल हो गया हो, बिलकुल असमर्थ दीखता हो, बिलकुल दया का पात्र बन गया हो, लेकिन उसमें सभ्यताएँ मिटाने और नवीन सभ्यताएँ गढ़ने की जो महान शक्ति है, उस पर भरोसा किस प्रकार छोड़ा जा सकता है? हो सकता है, वर्तमान सभ्यता की आग में मनुष्य बुरी तरह जलता हुआ दिखायी दे रहा हो, वस्तुतः बुरी तरह जल भी रहा है, लेकिन इस स्थिति से निराश होना आवश्यक नहीं। उसे सहारा देने की आवश्यकता है, उसमें आत्मविश्वास उत्पन्न करने की आवश्यकता है, उसे स्नेह के साथ उसकी क्षमता का स्मरण दिलाने की आवश्यकता है। वह स्वयं उस आग को बुझा सकता है, जिसमें वह झुलसता दीख रहा है, जिसमे वह जल रहा है। प्रश्न यह है कि उसे सहारा कौन दे, उसमे आत्मविश्वास कौन उत्पन्न करे, उसे उसकी क्षमता का स्मरण कौन दिलाये? 'मधुज्वाल' को पढ़ने से सहज ही स्पष्ट हो जाता है कि इन प्रश्न का ही उत्तर देने का प्रयत्न इस काव्य-संग्रह के कवि ने किया है। उसकी अभिलाषा है कि—

> मनु-पुत्र तिमिर को भेद बढ़े
> ऊषा के ज्योतित प्रांगण में,

क्योंकि उसे "प्यार की नव ज्योतिमाला" जगी हुई दिखायी देती है। कवि को विश्वास है कि—

थिरकती चाँदनी आकर
गले में फूल-सी मिलती

"मधुज्वालका' कवि जहाँ पर प्यार की महिमा से रात में स्निग्धता का दर्शन करता है, वहीं उसे उसी प्यार की महिमा से दिन का आगमन वसन्त के आगमन जैसा प्रतीत होता है। यह दिन का आगमन क्या है? जड़ता रूपी रात की समाप्ति के पश्चात् चेतना रूपी सूर्य का उदय, जिसकी किरणें ज्वार के समान दिग-दिगन्त में व्याप्त हो जाती हैं। कवि कहता है—

सिहरा समीर काँपीं कलियाँ,
वेसुध भावों की रंगरलियाँ।
कलि पर अलि का गुञ्जार जगा,
कण-कण में मादक प्यार जगा।
मानस का चेतन ज्वार जगा,
जड़ता के तम का हुआ अन्त।
प्राची में प्रमुदित हुआ धवल,
साकार स्वप्न लेकर वसन्त।

मनुष्य 'मन'-प्रधान प्राणी है। मानव का उत्साह जग उठने पर, मन में आशा का सञ्चार हो जाने पर, मन में विश्वास स्थापित हो जाने पर वह पहाड़ों को लाँघ सकता है, असम्भव को सम्भव कर सकता है। शर्त यह है कि उसके मन का उत्साह

क्योंकि उसे "प्यार की नव ज्योतिमाला" जगी हुई दिखायी देती है। कवि को विश्वास है कि—

थिरकती चाँदनी आकर
गले में फूल-सी मिलती

"मधुज्वालका' कवि जहाँ पर प्यार की महिमा से रात में स्निग्धता का दर्शन करता है, वहीं उसे उसी प्यार की महिमा से दिन का आगमन वसन्त के आगमन जैसा प्रतीत होता है। यह दिन का आगमन क्या है? जड़ता रूपी रात की समाप्ति के पश्चात् चेतना रूपी सूर्य का उदय, जिसकी किरणें ज्वार के समान दिग-दिगन्त में व्याप्त हो जाती हैं। कवि कहता है—

सिहरा समीर काँपीं कलियाँ,
वेसुध भावों की रंगरलियाँ।
कलि पर अलि का गुञ्जार जगा,
कण-कण में मादक प्यार जगा।
मानस का चेतन ज्वार जगा,
जड़ता के तम का हुआ अन्त।
प्राची में प्रमुदित हुआ धवल,
साकार स्वप्न लेकर वसन्त।

मनुष्य 'मन'-प्रधान प्राणी है। मानव का उत्साह जग उठने पर, मन में आशा का सञ्चार हो जाने पर, मन में विश्वास स्थापित हो जाने पर वह पहाड़ों को लाँघ सकता है, असम्भव को सम्भव कर सकता है। शर्त यह है कि उसके मन का उत्साह

शत - शत जन हैं करते
स्वागत प्रिय, आज तुम्हारा
— क्योंकि —
घन गहन तिमिर के उरमें
जगकर तुम ज्योति जगाते
पतझर के हारे दल पर
मधु गीत विजय के गाते

'मधुज्वालका' कवि अपनी आस्तिकता को जिन माध्यमों से भारत में व्यक्त हुआ देखता है, उनमें से चुने हुए चार को उसने २३ कविताओं के इस संग्रह में स्थान दिया है। वे चार माध्यम हैं—(१) जनतन्त्र, (२) श्रमजीवी (जिनके प्रतिनिधि रूप में कवि ने फेरीवाले को चुना है), (३) त्याग की महिमा को स्थापित करने में संलग्न विनोबा भावे और (४) आधुनिक भारत की रचनात्मक वृत्तियों के प्रतीक जवाहरलाल नेहरू। इन चार माध्यमों का चुनाव कवि ने यह स्पष्ट करने के ही लिए किया है कि पीड़ित मानव अपने उत्साह का उपयोग अपनी पीड़ा को दूर करने में तभी कर सकता है, जब उसमें सबको समान अधिकारी का दावेदार मानने की भावना हो, जब वह श्रम के प्रति आदर का भाव विकसित करे, जब समाज-व्यवस्था का आधार त्याग को ही बनाने में विश्वास रखे और जब अपनी भावनाओं तथा अपने विश्वासों को मूर्त रूप प्रदान करने के लिए शान्तिपूर्ण तरीकों से अपनी रचनात्मक शक्तियों का उपयोग करे।

शत - शत जन हैं करते
स्वागत प्रिय, आज तुम्हारा
— क्योंकि —
घन गहन तिमिर के उरमें
जगकर तुम ज्योति जगाते
पतझर के हारे दल पर
मधु गीत विजय के गाते

'मधुज्वालका' कवि अपनी आस्तिकता को जिन माध्यमों से भारत में व्यक्त हुआ देखता है, उनमें से चुने हुए चार को उसने २३ कविताओं के इस संग्रह में स्थान दिया है। वे चार माध्यम हैं—(१) जनतन्त्र, (२) श्रमजीवी (जिनके प्रतिनिधि रूप में कवि ने फेरीवाले को चुना है), (३) त्याग की महिमा को स्थापित करने में संलग्न विनोवा भावे और (४) आधुनिक भारत की रचनात्मक वृत्तियों के प्रतीक जवाहरलाल नेहरू। इन चार माध्यमों का चुनाव कवि ने यह स्पष्ट करने के ही लिए किया है कि पीड़ित मानव अपने उत्साह का उपयोग अपनी पीड़ा को दूर करने में तभी कर सकता है, जब उसमें सबको समान अधिकारों का दावेदार मानने की भावना हो, जब वह श्रम के प्रति आदर का भाव विकसित करे, जब समाज-व्यवस्था का आधार त्याग को ही बनाने में विश्वास रखे और जब अपनी भावनाओं तथा अपने विश्वासों को मूर्त रूप प्रदान करने के लिए शान्तिपूर्ण तरीकों से अपनी रचनात्मक शक्तियों का उपयोग करे।

कोई नव ज्योति जगाता हूँ।
मैं 'उसी विभा' पर वलिहारी;
सांसों के फूल चढ़ाता हूँ।
उसकी ही निष्ठा मे अपने,
प्राणों का सौरभ पाता हूँ॥

परम सत्ता तक पहुँचने के लिए 'ऐहिक रागमयता की' सहायता लेने की परम्परा भारत में नयी नहीं है। राधा के माध्यम से परम शक्ति तक अथवा कृष्ण के माध्यम से परम पुरुप तक पहुँचने का प्रयास क्या इस तथ्य को प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त नही? परम शक्ति तक पहुँचने के लिए भक्त कवियों ने राधा का जो आश्रय ग्रहण किया, उसने उन्हें अपनी शृङ्गार—विपयक भावनाएँ व्यक्त करने की पूरी छूट दी। उस छूट का उन्होंने पूरा-पूरा उपयोग किया, जिसका परिणाम यह हुआ कि जो लोग काव्य में शृङ्गार की प्रचुरता खोजते हैं, उन्हें भी राधा-कृष्ण-सम्बन्धी काव्य से सन्तोप हो ही जाता है। तो भी उनके मन पर जो यह छाप पड़ती है कि राधा परम शक्ति का प्रतीक थीं और कृष्ण परम पुरुप के प्रतीक थे, उसी का वास्तविक महत्व है, जिसे स्थापित करना वे भक्त कवि चाहते थे, जिन्होंने राधा-कृष्ण-सम्बन्ध के वर्णन में अपनी शृङ्गार-सम्बन्धी भावनाओं को मुक्त होकर व्यक्त किया।

स्त्री के प्रति पुरुप का एवं पुरुप के प्रति स्त्री का जो आकर्पण है, वह उसी प्रकृति की देन है, जिसने पहाड़, नदियां, झील, फूल-

कोई नव ज्योति जगाता है।
मैं 'उसी विभा' पर बलिहारी;
सांसों के फूल चढ़ाता हूं।
उसकी ही निष्ठा मे अपने,
प्राणों का सौरभ पाता हूं॥

परम सत्ता तक पहुँचने के लिए 'ऐहिक रागमयता की' सहायता लेने की परम्परा भारत में नयी नहीं है। राधा के माध्यम से परम शक्ति तक अथवा कृष्ण के माध्यम से परम पुरुष तक पहुँचने का प्रयास क्या इस तथ्य को प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त नही? परम शक्ति तक पहुँचने के लिए भक्त कवियों ने राधा का जो आश्रय ग्रहण किया, उसने उन्हें अपनी श्रृङ्गार—विषयक भावनाएँ व्यक्त करने की पूरी छूट दी। उस छूट का उन्होंने पूरा-पूरा उपयोग किया, जिसका परिणाम यह हुआ कि जो लोग काव्य में श्रृङ्गार की प्रचुरता खोजते हैं, उन्हें भी राधा-कृष्ण-सम्बन्धी काव्य से सन्तोष हो ही जाता है। तो भी उनके मन पर जो यह छाप पड़ती है कि राधा परम शक्ति का प्रतीक थीं और कृष्ण परम पुरुष के प्रतीक थे, उसी का वास्तविक महत्व है, जिसे स्थापित करना वे भक्त कवि चाहते थे, जिन्होंने राधा-कृष्ण-सम्बन्ध के वर्णन में अपनी श्रृङ्गार-सम्बन्धी भावनाओं को मुक्त होकर व्यक्त किया।

स्त्री के प्रति पुरुष का एवं पुरुष के प्रति स्त्री का जो आकर्षण है, वह उसी प्रकृति की देन है, जिसने पहाड़, नदियां, झील, फूल-

कल्पना की देहली पर
मैं जरा सुस्ता रहा हूँ॥

कवि कल्पना के दरवाजे पर जब पहुँच जाता है, तब उसे यह भी अनुभव होने लगता है कि वह उस प्रेयसी के द्वार पर भी पहुँच गया है, जिसके प्रति प्रणय-निवेदन करके वह अपना जीवन धन्य कर लेना चाहता है।

कल्पना के भीतर प्रवेश करने के बाद उस प्रेयसी को कवि पुकारना आरम्भ करता है। कवि यह नहीं चाहता कि उसकी पुकार पर कोई विशेष रूप ही धारण कर उसकी प्रेयसी उपस्थित हो। वह तो मौत के रूप में भी उसे पाकर धन्य ही होगा। 'विश्वास में' वह कहता है—

यह नहीं सम्भव कि बनकर
मौत भी तुम आ न पाओ।
यह नहीं सम्भव कि खोयी
प्रीति बनकर मुस्कुराओ॥

'स्वरालोक के' कविको प्रेयसी टेलीफोन-सन्देश नहीं भेजती: वह किसी दूत का भी सहारा नहीं लेती। उसकी प्रेयसी का सन्देश स्वप्नों के 'उस पार से' आया है और वही सन्देश उसकी वाणी मे बंधकर कविता बन गया है। 'मनुहार मे, वह कहता है—

कोई शुभ्र सन्देसा आया
सपनों के उस पार से।
झूम उठी कविता की वाणी
जीवन के सुनसान में॥

कल्पना की देहली पर
मैं जरा सुस्ता रहा हूँ ॥

कवि कल्पना के दरवाजे पर जब पहुँच जाता है, तब उसे यह भी अनुभव होने लगता है कि वह उस प्रेयसी के द्वार पर भी पहुँच गया है, जिसके प्रति प्रणय-निवेदन करके वह अपना जीवन धन्य कर लेना चाहता है।

कल्पना के भीतर प्रवेश करने के बाद उस प्रेयसी को कवि पुकारना आरम्भ करता है। कवि यह नहीं चाहता कि उसकी पुकार पर कोई विशेष रूप ही धारण कर उसको प्रेयसी उपस्थित हो। वह तो मौत के रूप में भी उसे पाकर धन्य ही होगा। 'विश्वास में' वह कहता है—

यह नहीं सम्भव कि बनकर
मौत भी तुम आ न पाओ।
यह नहीं सम्भव कि खोयी
प्रीति बनकर मुस्कुराओ ॥

'स्वरालोक के' कविको प्रेयसी टेलीफोन-सन्देश नहीं भेजती : वह किसी दूत का भी सहारा नहीं लेती। उसकी प्रेयसी का सन्देश स्पप्नों के 'उस पार से' आया है और वही सन्देश उसकी वाणी मे बंधकर कविता बन गया है। 'मनुहार मे, वह कहता है—

कोई शुभ्र सन्देसा आया
सपनों के उस पार से।
झूम उठी कविता की वाणी
जीवन के सुनसान मे ॥

आज का मनुष्य जो सर्वत्र अशान्ति, उपद्रव अकुलाहट देख रहा है ; स्वयं अनुभव कर रहा है, उसका कारण भी वह स्वयं ही है। जिस दिन वह हृदय को उसका उचित स्थान प्रदान करने की अनिवार्यता अनुभव करेगा, जिस दिन वह मस्तिष्क और हृदय की शक्तियों के बीच सन्तुलन स्थापित करने की अनिवार्यता अनुभव करेगा, उसी दिन से उसकी अशान्ति का, उसकी अकुलाहट का अवसान आरम्भ होगा। इस सन्देश को लेकर ही खण्डकाव्य 'आभास की' रचना की गयी प्रतीत होती है। कवि ने जिस वातावरण को वदलने के लिए 'आभास की' रचना की है, वह निम्नांकित पंक्तियों मे अंकित है—

गहन अशान्ति-तिमिर-हलचल से
सारा तन - मन - प्राण भरा है
जीवन के छोटे प्याले मे
यह कैसा तूफान भरा है ?

हृदय को उचित स्थान देने से कवि का क्या अर्थ है ? वह दिल को फेकते फिरना नहीं चाहता। वह दिल को लगाना चाहता है किसी पार्थिव वस्तु में नहीं, वरन "अपरिमित महाप्राण मे।" महाप्राण में दिल कैसे लग सकता है ? कवि स्वयं अपनी सीमाओं से अपरिचित नही। अतः उसने अपना दिल लगाने के लिए लक्ष्य वनाया है "अपरिमित" महाप्राण को नहीं, वरन महाप्राण की एक वून्द को। उस विन्दु के माध्यम से ही वह उस

आज का मनुष्य जो सर्वत्र अशान्ति, उपद्रव अकुलाहट देख रहा है ; स्वयं अनुभव कर रहा है, उसका कारण भी वह स्वयं ही है। जिस दिन वह हृदय को उसका उचित स्थान प्रदान करने की अनिवार्यता अनुभव करेगा, जिस दिन वह मस्तिष्क और हृदय की शक्तियों के बीच सन्तुलन स्थापित करने की अनिवार्यता अनुभव करेगा, उसी दिन से उसकी अशान्ति का, उसकी अकुलाहट का अवसान आरम्भ होगा। इस सन्देश को लेकर ही खण्डकाव्य 'आभास की' रचना की गयी प्रतीत होती है। कवि ने जिस वातावरण को बदलने के लिए 'आभास की' रचना की है, वह निम्नांकित पंक्तियों मे अंकित है—

गहन अशान्ति-तिमिर-हलचल से
सारा तन - मन - प्राण भरा है
जीवन के छोटे प्याले मे
यह कैसा तूफान भरा है ?

हृदय को उचित स्थान देने से कवि का क्या अर्थ है ? वह दिल को फेंकते फिरना नहीं चाहता। वह दिल को लगाना चाहता है किसी पार्थिव वस्तु में नहीं, वरन "अपरिमित महाप्राण मे।" महाप्राण में दिल कैसे लग सकता है ? कवि स्वयं अपनी सीमाओं से अपरिचित नही। अतः उसने अपना दिल लगाने के लिए लक्ष्य बनाया है "अपरिमित" महाप्राण को नहीं• वरन महाप्राण की एक बून्द को। उस बिन्दु के माध्यम से ही वह उस

बुद्धि जितना ही प्रयत्न करती है, उलझाव उतना ही बढ़ता है. मोह उतना ही बढ़ता है, सारा जीवन ही उलझा हुआ दृष्टिगोचर होता है, लेकिन वह निराश नहीं हो जाता। वह मार्ग खोजता है और उसे वह मार्ग दीखता है उस 'महाकाव्य में' जिसे 'महाप्राण ने' इस विशाल सृष्टि के रूप में लिख रखा है और जिसके लिखे जाने का सिलसिला एक क्षण भी रुका नहीं; रुकता नहीं। उस 'महाकाव्य' में ही कवि को अमृत खोज निकालने की आशा दीखती है। वह कहता है—

निर्निमेष दृग तेरी छवि पर
कब से रूप सुधा का प्यासा
तुझ पर ही तो टिकी हुई है
निरवलंब जीवन की आशा

सृष्टि के रूप में जो 'महाकाव्य' कवि की आँखों के सामने है, उसे वह 'महाप्राण' की एक बून्द मात्र मानता है। यह बून्द ही उसकी पकड़ में आ सकती है; उसकी अपनी सीमाओं के रहते हुए भी महाप्राण को पाने का माध्यम बन सकती है। प्रश्न यह है कि कवि उसे माध्यम किस प्रकार बनाये ? इस प्रश्न का उत्तर वह 'निरवलम्ब' शब्द के द्वारा देता है। बुद्धि से उपजनेवाले सब तर्कों को त्याग कर वह पूर्ण समर्पण के भाव से महाप्राण के सामने जाता है—सर्वथा 'निरवलम्ब' होकर। क्या यह 'निरवलम्बता' ही गोस्वामी तुलसीदास के समस्त काव्यों की मूल भावना नहीं बन गयी थी ? क्या यह 'निरवलंबता' ही कृष्ण के प्रति गाये गये सूर और मीरा के पदों मे व्यक्त नहीं हुई थी

बुद्धि जितना ही प्रयत्न करती है, उलझाव उतना ही बढ़ता है. मोह उतना ही बढ़ता है, सारा जीवन ही उलझा हुआ दृष्टिगोचर होता है, लेकिन वह निराश नहीं हो जाता। वह मार्ग खोजता है और उसे वह मार्ग दीखता है उस 'महाकाव्य में' जिसे 'महाप्राण ने' इस विशाल सृष्टि के रूप में लिख रखा है और जिसके लिखे जाने का सिलसिला एक क्षण भी रुका नहीं ; रुकता नहीं। उस 'महाकाव्य' में ही कवि को अमृत खोज निकालने की आशा दीखती है। वह कहता है—

निर्निमेष दृग तेरी छवि पर
कब से रूप सुधा का प्यासा
तुझ पर ही तो टिकी हुई है
निरवलंब जीवन की आशा

सृष्टि के रूप में जो 'महाकाव्य' कवि की आँखों के सामने है, उसे वह 'महाप्राण' की एक बून्द मात्र मानता है। यह बून्द ही उसकी पकड़ में आ सकती है ; उसकी अपनी सीमाओं के रहते हुए भी महाप्राण को पाने का माध्यम बन सकती है। प्रश्न यह है कि कवि उसे माध्यम किस प्रकार बनाये ? इस प्रश्न का उत्तर वह 'निरवलम्ब' शब्द के द्वारा देता है। बुद्धि से उपजनेवाले सब तर्कों को त्याग कर वह पूर्ण समर्पण के भाव से महाप्राण के सामने जाता है—सर्वथा 'निरवलम्ब' होकर। क्या यह 'निरवलम्बता' ही गोस्वामी तुलसीदास के समस्त काव्यों की मूल भावना नहीं बन गयी थी ? क्या यह 'निरवलंबता' ही कृष्ण के प्रति गाये गये सूर और मीरा के पदों मे व्यक्त नहीं हुई थी

मनुष्य की जय-यात्रा का गान ○ उद्बोधन

'मधुज्वाल के' कवि ने मनुष्य को आज की सभ्यता से मिली पीड़ाओ से मुक्त करने का जो व्रत लिया था, उसको पूरा करने के लिए उसने 'मधुज्वाल में' यह प्रयत्न किया है कि सबसे पहले मनुष्य में पीड़ाओं पर विजय पाने का आत्म-विश्वास जागृत हो। उसने सन्देश दिया है कि संसार मे 'मधु' और 'ज्वाल' दोनों ही है, किन्तु 'ज्वाल से' मुक्त रहने और 'मधु को' पाने के लिए आत्म-विश्वास चाहिए, जो केवल आस्तिकता से ही, इस सृष्टि के रचयिता की महान शक्ति में विश्वास रखने से ही प्राप्त हो सकता है।

'आभास में' कवि ने बताया कि इस सृष्टि के रचयिता मे विश्वास उत्पन्न होने का मार्ग क्या है। बुद्धि से उत्पन्न तर्कों के माध्यम से उसे पकड़ना या समझना कठिन है, क्योंकि जिस महाप्राण के महाकाव्य की एक बूँद मात्र यह विशाल सृष्टि है, उसे सीमित बुद्धिवाला मनुष्य तर्कों के माध्यम से कैसे पकड़ सकता है ? मनुष्य को बुद्धि मिली है सिर्फ इस तथ्य को समझने के लिए कि पूर्ण समर्पण के साथ महाप्राण के सामने जाये बिना मोह के विष से और उसकी पीड़ाओं से मुक्ति मिलना सम्भव नहीं एवं समर्पण की शक्ति केवल हृदय मे है ; बुद्धि मे नहीं। बुद्धि हारती है, वास्तविक आत्मसमर्पण केवल हृदय करता है।

मनुष्य को पीड़ाओं से मुक्त करने का व्रत लिये हुए 'मधु-

मनुष्य की जय-यात्रा का गान ० उद्बोधन

'मधुज्वाल के' कवि ने मनुष्य को आज की सभ्यता से मिली पीड़ाओं से मुक्त करने का जो व्रत लिया था, उसको पूरा करने के लिए उसने 'मधुज्वाल में' यह प्रयत्न किया है कि सबसे पहले मनुष्य में पीड़ाओं पर विजय पाने का आत्म-विश्वास जागृत हो। उसने सन्देश दिया है कि संसार मे 'मधु' और 'ज्वाल' दोनों ही है, किन्तु 'ज्वाल से' मुक्त रहने और 'मधु को' पाने के लिए आत्म-विश्वास चाहिए, जो केवल आस्तिकता से ही, इस सृष्टि के रचयिता की महान शक्ति में विश्वास रखने से ही प्राप्त हो सकता है।

'आभास में' कवि ने बताया कि इस सृष्टि के रचयिता मे विश्वास उत्पन्न होने का मार्ग क्या है। बुद्धि से उत्पन्न तर्कों के माध्यम से उसे पकड़ना या समझना कठिन है, क्योंकि जिस महाप्राण के महाकाव्य की एक बूंद मात्र यह विशाल सृष्टि है, उसे सीमित बुद्धिवाला मनुष्य तर्कों के माध्यम से कैसे पकड़ सकता है? मनुष्य को बुद्धि मिली है सिर्फ इस तथ्य को समझने के लिए कि पूर्ण समर्पण के साथ महाप्राण के सामने जाये बिना मोह के विष से और उसकी पीड़ाओं से मुक्ति मिलना सम्भव नहीं एवं समर्पण की शक्ति केवल हृदय मे है; बुद्धि मे नहीं। बुद्धि हारती है, वास्तविक आत्मसमर्पण केवल हृदय करता है।

मनुष्य को पीड़ाओं से मुक्त करने का व्रत लिये हुए 'मधु-

मनुष्य भी क्यों तिमिर से संघर्ष नहीं कर सकता, जबकि वह विधाता द्वारा रचा गया सर्वश्रेष्ठ प्राणी अपने को मानता है ? इस प्रश्न के साथ 'उद्बोधन' का कवि 'प्रयाण-गीत' सुनाता है। वह कहता है :—

घहर रही है दुन्दुभी
प्रयाण - पंथ पर सभी
बढ़ो, अजेय वीरवर,
रुको न मार्ग मे कभी

'नाविक', 'सिपाही', 'हम स्वतन्त्र आज हैं', 'स्वदेश-वन्दन', 'होड़' इत्यादि रचनाओं के माध्यम से 'उद्बोधन' का कवि भारतीय पाठकों की समझ में आने योग्य और उनके जाने-पहचाने ऐसे चरित्रों को चुनता है, जो मनुष्य की विजय-शक्ति का स्मरण दिलाने में सहायक हो सकते हैं। 'नाविक को' पराजय की भावना पर विजय पाने के लिए ललकारता हुआ वह कहता है :—

मान ली क्या हार नाविक ?

× × ×

सिन्धु का घनघोर गर्जन
रोक पायेगा न जीवन—
की तरी को एक भी क्षण।

'सिपाही के' रूप में 'उद्बोधन के' कवि को बाधाओं पर विजय पाने के व्रती मनुष्य का रूप साकार दिखायी देता है।

मनुष्य भी क्यों तिमिर से संघर्ष नहीं कर सकता, जबकि वह विधाता द्वारा रचा गया सर्वश्रेष्ठ प्राणी अपने को मानता है ? इस प्रश्न के साथ 'उद्बोधन' का कवि 'प्रयाण-गीत' सुनाता है। वह कहता है :—

घहर रही है दुन्दुभी
प्रयाण - पंथ पर सभी
बढ़ो, अजेय वीरवर,
रुको न मार्ग में कभी

'नाविक', 'सिपाही', 'हम स्वतन्त्र आज हैं', 'स्वदेश-वन्दन', 'होड़' इत्यादि रचनाओं के माध्यम से 'उद्बोधन' का कवि भारतीय पाठकों की समझ में आने योग्य और उनके जाने-पहचाने ऐसे चरित्रों को चुनता है, जो मनुष्य की विजय-शक्ति का स्मरण दिलाने में सहायक हो सकते हैं। 'नाविक को' पराजय की भावना पर विजय पाने के लिए ललकारता हुआ वह कहता है :—

मान ली क्या हार नाविक ?

× × ×

सिन्धु का घनघोर गर्जन
रोक पायेगा न जीवन—
की तरी को एक भी क्षण।

'सिपाही के' रूप में 'उद्बोधन के' कवि को बाधाओं पर विजय पाने के व्रती मनुष्य का रूप साकार दिखायी देता है।

आज वैर-द्वेप का
अन्त दुःख-क्लेश का

× × ×

प्रेम - शान्ति - सान्त्वना
तीन रंग का बना
हिन्द का प्रतीक यह
निशान शान से तना।

'उद्बोधन' का कवि मानव जाति को जगाने के लिए; उसे उसकी पीड़ाओं से मुक्ति दिलाने के लिए; उसे उसकी बाधाओं पर विजयी बनाने के लिए भारत और भारतीयो को ही माध्यम बनाना उचित क्यों मान बैठा? क्या उसकी दृष्टि संकुचित है; पक्षपातपूर्ण है? इस प्रश्न का उत्तर वह 'स्वदेश-वन्दन' मे देता है। वह कहता है—

मेरी धरती पुण्यवती है।
सबसे बढ़कर वीरव्रती है॥

× × ×

गूँजा इसकी पुण्य भूमि पर।
तत्व-ज्ञानमय ऋषियों का स्वर॥

× × ×

जहाँ 'सभीका' है उत्कर्प।
वही हमारा भारतवर्प॥

आज वैर-द्वेष का
अन्त दुःख-क्लेश का

× × ×

प्रेम - शान्ति - सान्त्वना
तीन रंग का बना
हिन्द का प्रतीक यह
निशान शान से तना।

'उद्‌बोधन' का कवि मानव जाति को जगाने के लिए ; उसे उसकी पीड़ाओं से मुक्ति दिलाने के लिए ; उसे उसकी बाधाओं पर विजयी बनाने के लिए भारत और भारतीयों को ही माध्यम बनाना उचित क्यों मान बैठा ? क्या उसकी दृष्टि संकुचित है ; पक्षपातपूर्ण है ? इस प्रश्न का उत्तर वह 'स्वदेश-वन्दन' में देता है। वह कहता है—

मेरी धरती पुण्यवती है।
सबसे बढ़कर वीरव्रती है॥

× × ×

गूँजा इसकी पुण्य भूमि पर।
तत्व-ज्ञानमय ऋषियों का स्वर॥

× × ×

जहाँ 'सभीका' है उत्कर्ष।
वही हमारा भारतवर्ष॥

इत्यादि रचनाओं में कवि की वे प्रतिक्रियायें अङ्कित है, जो प्रकृति के विविध रूपों को देखकर उसमें उत्पन्न हुई है। वह प्रकृति के इन रूपों में ही उन बाधाओं के दर्शन करता है, जो मानव की सुख-प्राप्ति में उसे बाधा जँचती हैं ; वह इन रूपों मे ही आशा के आधार भी खोजता है और वह इन रूपों में ही विजय के प्रतीक भी पा लेता है। 'वसन्तागम' शीर्पकवाली कविता मे वह कहता है—

लगा हुआ है हास-रुदन
उत्थान-पतन जग-आगन में
छिपा सृजन है महा नाश में
छिपी मृत्यु है जीवन मे
मिलन हुआ यदि प्रियका तो फिर
विरह निकट ही है अत्यन्त
फिर-फिर आता क्यों वसन्त ?

'वसन्तागम में' जो प्रश्न उसके हृदय से फूटा है, वह अनेक कविताओं के माध्यम से व्यक्त हुआ, लेकिन उसका हृदय स्वयं इस प्रश्न का उत्तर भी खोज लेता है। 'चित्रपटी मे' कवि कहता है—

वर्तमान की चित्रपटी पर
भावी की रेखा अनुपम है
आज भले जैसा भी दिन हो
आनेवाला किससे कम है ?

इत्यादि रचनाओं में कवि की वे प्रतिक्रियायें अङ्कित है, जो प्रकृति के विविध रूपों को देखकर उसमें उत्पन्न हुई है। वह प्रकृति के इन रूपों में ही उन वाधाओं के दर्शन करता है, जो मानव की सुख-प्राप्ति में उसे वाधा जँचती हैं ; वह इन रूपों मे ही आशा के आधार भी खोजता है और वह इन रूपों में ही विजय के प्रतीक भी पा लेता है। 'वसन्तागम' शीर्षकवाली कविता मे वह कहता है—

लगा हुआ है हास-रुदन
उत्थान-पतन जग-आगन में
छिपा सृजन है महा नाश में
छिपी मृत्यु है जीवन मे
मिलन हुआ यदि प्रियका तो फिर
विरह निकट ही है अत्यन्त
फिर-फिर आता क्यों वसन्त ?

'वसन्तागम में' जो प्रश्न उसके हृदय से फूटा है, वह अनेक कविताओं के माध्यम से व्यक्त हुआ, लेकिन उसका हृदय स्वयं इस प्रश्न का उत्तर भी खोज लेता है। 'चित्रपटी मे' कवि कहता है—

वर्तमान की चित्रपटी पर
भावी की रेखा अनुपम है
आज भले जैसा भी दिन हो
आनेवाला किससे कम है ?

आदर्श तुलसी को ही मानता है, क्योंकि तुलसी संसार में राम की प्रतिष्ठा करने से ही सन्तुष्ट नहीं हो गये, वरन उन्हें सारी सृष्टि उस समय राममय मालूम होने लगी, जब वास्तविक ज्ञान उन्होंने उपलब्ध कर लिया। 'संचरण में' कवि कहता है—

जिसे खोजती सन्ध्या नित आ
रजनी रही पुकार जिसे।
नित्य गगन-वातायन से आ
उडु शशि रहे निहार जिसे॥
देखा, लगा चराचर जग का
सत्य—राममय तुलसी को।
नमन किया भू-गिरि-वन-सागर,
देवि शारदा वर-श्रीको॥

× × ×

बीती रात, प्रभा की किरणें
तिमिर-कलश को फोड़ चलीं।
कवि के उर की ज्ञान-किरण भी
तम की कारा तोड़ चली॥

मनुष्य की विविध गतिविधियों के प्रति कवि की प्रतिक्रिया उसके वैयक्तिक अनुभवों पर आधारित है। अनुरोध, आस्था, परिचय, याचना, जिज्ञासा, आदेश, राही· उपालम्भ, विश्वास, विभाकर, अनुरंजन, तुम्हारे पास, दर्शन, पहचान, धीरे-धीरे मुझे पुकारो, नवजीवन, सपनों की बरसात· सत्य का बल·

आदर्श तुलसी को ही मानता है, क्योंकि तुलसी संसार में राम की प्रतिष्ठा करने से ही सन्तुष्ट नहीं हो गये, वरन उन्हें सारी सृष्टि उस समय राममय मालूम होने लगी, जब वास्तविक ज्ञान उन्होंने उपलब्ध कर लिया। 'संचरण में' कवि कहता है—

जिसे खोजती सन्ध्या नित आ
रजनी रही पुकार जिसे।
नित्य गगन-वातायन से आ
उडु शशि रहे निहार जिसे॥
देखा, लगा चराचर जग का
सत्य—राममय तुलसी को।
नमन किया भू-गिरि-वन-सागर,
देवि शारदा वर-श्रीको॥

× × ×

बीती रात, प्रभा की किरणें
तिमिर-कलश को फोड़ चलीं।
कवि के उर की ज्ञान-किरण भी
तम की कारा तोड़ चली॥

मनुष्य की विविध गतिविधियों के प्रति कवि की प्रतिक्रिया उसके वैयक्तिक अनुभवों पर आधारित है। अनुरोध, आस्था, परिचय, याचना, जिज्ञासा, आदेश, राही, उपालम्भ, विश्वास, विभाकर, अनुरंजन, तुम्हारे पास, दर्शन, पहचान, धीरे-धीरे मुझे पुकारो, नवजीवन, सपनों की बरसात, सत्य का बल,

बन्द घर की कोठरी
मेरे लिए संसार है।
एक केवल साधना,
इस सिद्धि का आधार है

कवि साधना से घबड़ाता नहीं, क्योंकि वह संसार में रहकर साधना करने की कठिनाइयों से अपरिचित नहीं। उसे अपने ऊपर विश्वास है, जिससे वह कठिनाइयों पर विजय पा जाने के बारे में पूर्णतया आश्वस्त है। 'दुनिया' मे वह कहता है—

जगने भी मुझको ललकारा,
लेकिन मेरे आगे हारा।
मैं आशा का ले शिव संबल,
हूं चला बनाने विश्व नवल॥

× × ×

यह ज्योति दूर तक जागेगी।
भय का अवगुण्ठन त्यागेगी॥

मनुष्य को क्षुद्रता से ऊपर उठाने का प्रयत्न ० संदीप्ति

जो 'विशाल' के प्रति समर्पित हो जाता है, अपने को समर्पित कर देता है, उसमे विशालता के तत्त्व अपने-आप उत्पन्न और पुष्ट होने लगते है। प्रकृति से अधिक विशाल और कौन हो सकता है; क्या हो सकता है?

बन्द घर की कोठरी
मेरे लिए संसार है।
एक केवल साधना,
इस सिद्धि का आधार है

कवि साधना से घबड़ाता नहीं, क्योंकि वह संसार में रहकर साधना करने की कठिनाइयों से अपरिचित नहीं। उसे अपने ऊपर विश्वास है, जिससे वह कठिनाइयों पर विजय पा जाने के बारे में पूर्णतया आश्वस्त है। 'दुनिया' मे वह कहता है—

जगने भी मुझको ललकारा,
लेकिन मेरे आगे हारा।
मैं आशा का ले शिव संबल,
हूं चला बनाने विश्व नवल॥

× × ×

यह ज्योति दूर तक जागेगी।
भय का अवगुण्ठन त्यागेगी॥

मनुष्य को क्षुद्रता से ऊपर उठाने का प्रयत्न ० ० संदीप्ति

जो 'विशाल' के प्रति समर्पित हो जाता है, अपने को समर्पित कर देता है, उसमे विशालता के तत्व अपने-आप उत्पन्न और पुष्ट होने लगते है। प्रकृति से अधिक विशाल और कौन हो सकता है; क्या हो सकता है?

कार, सन्ध्या, तारा, पक्षी, पुरवाई इत्यादि कवि को अपने परिचित तत्व मालूम होते है, जिनके माध्यम से हृदय के भावो को व्यक्त करने में उसे सुविधा का बोध होता है।

'संदीप्ति के' कवि के हृदय के भाव क्या हं ? उसके भाव वही हैं, जिनको लेकर उसने 'मधुज्वाल के' साथ काव्यलेखन-क्षेत्र में पदार्पण किया। वह इस विश्वास के साथ ही बढ़ता प्रतीत होता है कि आज के मनुष्य की पीड़ा—ज्वाला मिटायी जा सकती है, लेकिन आवश्यक यह है कि मनुष्य हृदय को स्वाभाविक गति से चलने दे; हृदय को मस्तिष्क के बोझ से लाद-कर—दबाकर निष्क्रिय नहीं बना दे।

हृदय की स्वाभाविक गति क्या है ? उसमें स्नेह, आशा और विश्वास को स्थान प्राप्त है, तो घृणा, रोप, निराशा तथा अविश्वास को भी स्थान प्राप्त है। दोनो प्रकार के रागों का उत्पन्न होना हृदय की स्वाभाविक गति है। जो राग अन्धकार से प्रकाश की ओर, निराशा से आशा की ओर, अविश्वास से विश्वास की ओर मनुष्य को ले जा सकते हैं, उनको बढ़ावा देने के लिए मस्तिष्क की शक्ति आवश्यक होती है, ताकि निराशा, अविश्वास एवं अन्धकार की ओर ले जानेवाले रागों को अनु-शासन मे रखा जा सके : निरंकुश बनने से रोका जा सके। उन रागों को भी 'संदीप्ति' का कवि मिटा देना नहीं चाहता, क्योंकि वे भी मानव-स्वभाव के अंग उसी हद तक हैं, जिस हद

कार, सन्ध्या, तारा, पक्षी, पुरवाई इत्यादि कवि को अपने परिचित तत्व मालूम होते है, जिनके माध्यम से हृदय के भावो को व्यक्त करने में उसे सुविधा का बोध होता है।

'संदीप्ति के' कवि के हृदय के भाव क्या हैं ? उसके भाव वही हैं, जिनको लेकर उसने 'मधुज्वाल के' साथ काव्यलेखन-क्षेत्र में पदार्पण किया। वह इस विश्वास के साथ ही बढ़ता प्रतीत होता है कि आज के मनुष्य की पीड़ा—ज्वाला मिटायी जा सकती है, लेकिन आवश्यक यह है कि मनुष्य हृदय को स्वाभाविक गति से चलने दे; हृदय को मस्तिष्क के बोझ से लाद-कर—दबाकर निष्क्रिय नहीं बना दे।

हृदय की स्वाभाविक गति क्या है ? उसमें स्नेह, आशा और विश्वास को स्थान प्राप्त है, तो घृणा, रोष, निराशा तथा अविश्वास को भी स्थान प्राप्त है। दोनो प्रकार के रागों का उत्पन्न होना हृदय की स्वाभाविक गति है। जो राग अन्धकार से प्रकाश की ओर, निराशा से आशा की ओर, अविश्वास से विश्वास की ओर मनुष्य को ले जा सकते हैं, उनको बढ़ावा देने के लिए मस्तिष्क की शक्ति आवश्यक होती है, ताकि निराशा, अविश्वास एवं अन्धकार की ओर ले जानेवाले रागों को अनु-शासन मे रखा जा सके; निरंकुश बनने से रोका जा सके। उन रागों को भी 'संदीप्ति' का कवि मिटा देना नहीं चाहता, क्योंकि वे भी मानव-स्वभाव के अंग उसी हद तक हैं, जिस हद

अब तक कुछ भी थाह।
सबने देखा ऊपर-ऊपर—
जीवन-वैभव का स्वर भास्कर।
नहीं किसी ने देखी अब तक,
सागर मन की चाह।

हृदय को शक्तिशाली बनाने का ही प्रयत्न दिखायी देता है; जब 'सजाओ में' कवि कहता है—

उर के बिखरे तारों को प्रिय
आज सजाओ
गाओ निर्मल गीत हृदय का
फूल खिले मनके परिचय का

हृदय को शक्तिशाली बनाने के इस प्रयत्न को—उसे उचित स्थान देने के प्रयत्न को, उसका जो स्थान मस्तिष्क ने हड़प लिया है, वह उसे वापस देने के प्रयत्न को आज-कल के तथाकथित मानवतावादी आलोचक प्रतिक्रियावादी, पूँजीवादी इत्यादि विशेषणों का शिकार भले ही बनायें, लेकिन वास्तविकता यह है कि 'संदीप्तिका' कवि पूँजीपति होकर भी न पूँजीवाद का प्रशंसक है और न प्रतिक्रियावाद का समर्थक। वह केवल मानवतावादी है, क्योंकि मनुष्य केवल मनुष्य रहकर ही उस उत्पीड़न से मुक्ति पा सकता है, जिसे उस पर पहले पूँजीवाद ने लादा और बाद में साम्यवाद के नाम पर उस पर सरकारी पूँजीवाद (कम्यूनिज्म) ने लादा है। वह हृदय को शक्तिशाली बनाना चाहता है,

अब तक कुछ भी थाह।
सबने देखा ऊपर-ऊपर—
जीवन-वैभव का स्वर भास्कर।
नहीं किसी ने देखी अब तक,
सागर मन की चाह।

हृदय को शक्तिशाली बनाने का ही प्रयत्न दिखायी देता है; जब 'सजाओ में' कवि कहता है—

उर के बिखरे तारों को प्रिय
आज सजाओ
गाओ निर्मल गीत हृदय का
फूल खिले मनके परिचय का

हृदय को शक्तिशाली बनाने के इस प्रयत्न को—उसे उचित स्थान देने के प्रयत्न को, उसका जो स्थान मस्तिष्क ने हड़प लिया है, वह उसे वापस देने के प्रयत्न को आज-कल के तथाकथित मानवतावादी आलोचक प्रतिक्रियावादी, पूँजीवादी इत्यादि विशेषणों का शिकार भले ही बनायें, लेकिन वास्तविकता यह है कि 'संदीप्तिका' कवि पूँजीपति होकर भी न पूँजीवाद का प्रशंसक है और न प्रतिक्रियावाद का समर्थक। वह केवल मानवतावादी है, क्योंकि मनुष्य केवल मनुष्य रहकर ही उस उत्पीड़न से मुक्ति पा सकता है, जिसे उस पर पहले पूँजीवाद ने लादा और बाद मे साम्यवाद के नाम पर उस पर सरकारी पूँजीवाद (कम्यूनिज्म) ने लादा है। वह हृदय को शक्तिशाली बनाना चाहता है,

कवि प्रकट करता है कि इन्द्रियों से जो कुछ ग्राह्य है, उससे परे भी एक शक्ति है, जो सब कुछ को संचालित करती है और जिसके संकेत के बिना एक पत्ते का हिलना तक सम्भव नहीं। उस शक्ति के प्रति सम्पूर्ण आत्मसमर्पण करके ही अपने क्रिया-कलापों को चलाना शान्ति और आनन्द का एकमात्र मार्ग है। इस तथ्य का प्रतिपादन 'संवेग' की कविताओं का उद्देश्य है।

'संवेग' का कवि आरम्भ से ही इस प्रयत्न में जुटा है कि मनुष्य हृदय का मूल्य समझे, उसका महत्व समझे, क्योंकि इसके बिना समस्त ज्ञान-विज्ञान उसे सुख-शान्ति देने में असमर्थ रहेगा, उल्टे उसके असुख-अशान्ति का कारण बनता जायगा। हृदय सुख-शान्ति दिलाने की दिशा में क्या चमत्कार उत्पन्न कर सकता है, यह देखना हो, तो उसे अहंकार की भावना से मुक्त करना होगा और उसे अहंकार मुक्त करने के लिए सर्वश्रेष्ठ उपाय उस महाशक्ति के प्रति हृदय का आत्मसमर्पण है, जो सृष्टि को संचालित करती है। उस महाशक्ति से याचना करते हुए कवि 'चूर्ण करो' शीर्षकवाली कविता में कहता है—

चूर्ण करो अभिमान,
रहे न कुछ भी जिससे मन में,
जागे गर्व महान्।

× × ×

कवि प्रकट करता है कि इन्द्रियों से जो कुछ ग्राह्य है, उससे परे भी एक शक्ति है, जो सब कुछ को संचालित करती है और जिसके संकेत के बिना एक पत्ते का हिलना तक सम्भव नहीं। उस शक्ति के प्रति सम्पूर्ण आत्मसमर्पण करके ही अपने क्रिया-कलापों को चलाना शान्ति और आनन्द का एकमात्र मार्ग है। इस तथ्य का प्रतिपादन 'संवेग' की कविताओं का उद्देश्य है।

'संवेग' का कवि आरम्भ से ही इस प्रयत्न में जुटा है कि मनुष्य हृदय का मूल्य समझे, उसका महत्व समझे, क्योंकि इसके बिना समस्त ज्ञान-विज्ञान उसे सुख-शान्ति देने में असमर्थ रहेगा, उल्टे उसके असुख-अशान्ति का कारण बनता जायगा। हृदय सुख-शान्ति दिलाने की दिशा में क्या चमत्कार उत्पन्न कर सकता है, यह देखना हो, तो उसे अहंकार की भावना से मुक्त करना होगा और उसे अहंकार मुक्त करने के लिए सर्वश्रेष्ठ उपाय उस महाशक्ति के प्रति हृदय का आत्मसमर्पण है, जो सृष्टि को संचालित करती है। उस महाशक्ति से याचना करते हुए कवि 'चूर्ण करो' शीर्षकवाली कविता में कहता है—

> चूर्ण करो अभिमान,
> रहे न कुछ भी जिससे मन में,
> जागे गर्व महान्।

× × ×

अपना दिल बहलाने को है,
तरह - तरह की भाषा।

× × ×

सबके दो-दो रूप प्रकट हैं,
भीतर बाहर अन्तर।

× × ×

आओ हे घनश्याम धरा पर,
भवका ताप बुझाओ।

'संवेग के' कवि को 'घनश्याम में' आशा नजर आती है, क्योंकि उसे विश्वास है कि यदि हृदय के तारों को ठीक से छेड़ा जाय, तो उनसे निकले स्वर को सुनने से इनकार करना घनश्याम के लिए सम्भव नहीं। कवि का यह विश्वास ही प्रकट होता है, जब वह (मानो स्वयं घनश्याम की ओर से) 'आश्वासन' शीर्षक की कविता मे कहता है—

जब चाहो, आवाज लगाओ,
आऊँगा;
मैं तुमसे कुछ दूर नहीं हूँ
किसी तरह मजबूर नहीं हूं
जब चाहो, तारों को छेड़ो
गाऊँगा, आऊँगा

× × ×

अपना दिल बहलाने को है,
तरह - तरह की भाषा।

× × ×

सबके दो-दो रूप प्रकट हैं,
भीतर बाहर अन्तर।

× × ×

आओ हे घनश्याम धरा पर,
भवका ताप बुझाओ।

'संवेग के' कवि को 'घनश्याम में' आशा नजर आती है; क्योंकि उसे विश्वास है कि यदि हृदय के तारों को ठीक से छेड़ा जाय, तो उनसे निकले स्वर को सुनने से इनकार करना घनश्याम के लिए सम्भव नहीं। कवि का यह विश्वास ही प्रकट होता है, जब वह (मानो स्वयं घनश्याम की ओर से) 'आश्वासन' शीर्षक की कविता मे कहता है—

जब चाहो, आवाज लगाओ,
आऊँगा;
मैं तुमसे कुछ दूर नहीं हूँ
किसी तरह मजबूर नहीं हूँ
जब चाहो, तारों को छेड़ो
गाऊँगा, आऊँगा

× × ×

क्या 'संवेग' का कवि घनश्याम को प्राप्त कर लेगा? इस प्रश्न का उत्तर वह स्वयं देता है और उत्तर देते-देते पूछने लगता है—क्यों नहीं, क्यों नहीं? घनश्याम को पाना सम्भव है, सर्वथा सम्भव है। यदि प्रयत्न की धारा अविराम गति से चले, यदि प्रयत्न उमंग के साथ किया जाता रहे और यदि निराश होकर बीच रास्ते में ही उत्साह को भंग नहीं कर डाला जाय। वह 'हंसते-हंसते पार करेंगे' शीर्षक की कविता में कहता है—

एक बात है, धार न टूटे
मन में रहे उमंग बराबर
हंसते-गाते रहें निरन्तर
मन में रहे तरंग बराबर

फिर क्या बाधा; कैसी अड़चन?

क्या 'संवेग' के कवि ने घनश्याम को प्राप्त कर लिया? इस प्रश्न का उत्तर वह स्पष्ट 'हाँ' कहकर नहीं देता। वह केवल इतने से ही सन्तोष करता है कि पता नहीं, कब कोई उसकी गैरजानकारी में ही एक दीप जला गया है, रोशनी बिखेर गया है। 'संवेग' की अन्तिम कविता में वह कहता है—

विहंसा मधुर प्रदीप
जला गया कोई अनजाने
इस मन्दिर का दीप

क्या 'संवेग' का कवि घनश्याम को प्राप्त कर लेगा? इस प्रश्न का उत्तर वह स्वयं देता है और उत्तर देते-देते पूछने लगता है—क्यों नहीं, क्यों नहीं? घनश्याम को पाना सम्भव है, सर्वथा सम्भव है। यदि प्रयत्न की धारा अविराम गति से चले, यदि प्रयत्न उमंग के साथ किया जाता रहे और यदि निराश होकर बीच रास्ते में ही उत्साह को भंग नहीं कर डाला जाय। वह 'हंसते-हंसते पार करेंगे' शीर्षक की कविता में कहता है—

एक बात है, धार न टूटे
मन में रहे उमंग बराबर
हंसते-गाते रहें निरन्तर
मन में रहे तरंग बराबर

फिर क्या बाधा; कैसी अड़चन?

क्या 'संवेग' के कवि ने घनश्याम को प्राप्त कर लिया? इस प्रश्न का उत्तर वह स्पष्ट 'हाँ' कहकर नहीं देता। वह केवल इतने से ही सन्तोष करता है कि पता नहीं, कब कोई उसकी गैरजानकारी में ही एक दीप जला गया है, रोशनी बिखेर गया है। 'संवेग' की अन्तिम कविता में वह कहता है—

विहंसा मधुर प्रदीप
जला गया कोई अनजाने
इस मन्दिर का दीप

प्रयत्न भी कवि ने इस काव्यसंग्रह में किया है। नेहरू "सूत्रधार" के कवि को श्रद्धापात्र क्यों जंचते हैं ? इस प्रश्न का उत्तर उसने 'आलोकव्रती' में इस प्रकार दिया है—

जब सूरज नभ में मुसकाता
मिटती भूतल की अंधियारी
हँसने लगते भौंरे खुलकर
सजती सुमनों की फुलवारी
दुनिया जगती खगकुल गाते
नव आलोक धरापर आता
चेतनता की शिखा सुलगती
जड़ता का बन्धन कट जाता
इसी तरह जब 'जननायकका'
स्वर लहराया, जीवन आया

नेहरू के स्वर में कवि को उसी प्रकार की रोशनी दिखायी पड़ी, जिस प्रकार की रोशनी प्रातःकाल मे उदित होते हुए सूरज से फूटकर निकल पड़ती है। जो कवि निराशा के अन्धकार मे भटकते हुए लोगों को आशा के प्रकाश में ले आना चाहता हो, उसे यदि नेहरूमे ही बाल रवि का प्रकाश नजर आया, तो नेहरू के प्रति उसका श्रद्धाविनत नहीं होना ही अस्वाभाविक होता। 'याचना' मे नेहरू के बारे मे अपना मूल्यांकन उपस्थित करते हुए वह कहता है—

प्रयत्न भी कवि ने इस काव्यसंग्रह में किया है। नेहरू "सूत्रधार" के कवि को श्रद्धापात्र क्यों जंचते हैं? इस प्रश्न का उत्तर उसने 'आलोकव्रती' में इस प्रकार दिया है—

जव सूरज नभ में मुसकाता
मिटती भूतल की अंधियारी
हॅसने लगते भौंरे खुलकर
सजती सुमनों की फुलवारी
दुनिया जगती खगकुल गाते
नव आलोक धरापर आता
चेतनता की शिखा सुलगती
जड़ता का वन्धन कट जाता
इसी तरह जव 'जननायकका'
स्वर लहराया, जीवन आया

नेहरू के स्वर में कवि को उसी प्रकार की रोशनी दिखायी पड़ी, जिस प्रकार की रोशनी प्रातःकाल मे उदित होते हुए सूरज से फूटकर निकल पड़ती है। जो कवि निराशा के अन्धकार मे भटकते हुए लोगों को आशा के प्रकाश में ले आना चाहता हो, उसे यदि नेहरूमे ही वाल रवि का प्रकाश नजर आया, तो नेहरू के प्रति उसका श्रद्धाविनत नहीं होना ही अस्वाभाविक होता। 'याचना' मे नेहरू के वारे मे अपना मूल्याकन उपस्थित करते हुए वह कहता है—

प्रयत्नशील रहते थे। हृदयपरिवर्तन को एक शास्त्र के रूप में जिस गांधी ने प्रतिष्ठित कर दिया, उसके उत्तराधिकारी से ऐसी आशा की ही जा सकती थी ; वह पूरी भी हुई। इस प्रसंग को चित्रित करते हुए 'सूत्रधारका' कवि 'शान्तिद्रष्टा में, कहता है—

आये बापू अलख जगाते
जय का निर्भय गीत सुनाते।
× × ×
जागी भारत की तरुणाई
कुर्बानी की वेला आयी।
× × ×
नर-नारी के प्राण जवाहर
भारत के ईमान जवाहर।
रुक न सके आनन्द - भवन में
दौड़े आये भीषण रण में॥

जवाहरलाल हृदय की बोली बोलते थे। अतः उसका सीधा असर जनता के हृदय पर पड़ता था। उन्होंने राष्ट्रनिर्माण की पुकार की। उसका जो असर पड़ा, उसे अंकित करते हुए कवि "निर्माणोन्मुख" में कहता है—

देश बढ़ा आगे - आगे, था
जय का नया प्रकाश।
नयी दीप्ति से था आलोकित
जीवन का इतिहास।
× × ×

प्रयत्नशील रहते थे। हृदयपरिवर्तन को एक शास्त्र के रूप में जिस गांधी ने प्रतिष्ठित कर दिया, उसके उत्तराधिकारी से ऐसी आशा की ही जा सकती थी; वह पूरी भी हुई। इस प्रसंग को चित्रित करते हुए 'सूत्रधारका' कवि 'शान्तिद्रष्टा में, कहता है—

आये वापू अलख जगाते
जय का निर्भय गीत सुनाते।
× × ×
जागी भारत की तरुणाई
कुर्बानी की वेला आयी।
× × ×
नर-नारी के प्राण जवाहर
भारत के ईमान जवाहर।
रुक न सके आनन्द-भवन में
दौड़े आये भीपण रण में॥

जवाहरलाल हृदय की वोली वोलते थे। अतः उसका सीधा असर जनता के हृदय पर पड़ता था। उन्होंने राष्ट्रनिर्माण की पुकार की। उसका जो असर पड़ा, उसे अंकित करते हुए कवि "निर्माणोन्मुख" में कहता है—

देश वढ़ा आगे - आगे, था
जय का नया प्रकाश।
नयी दीप्ति से था आलोकित
जीवन का इतिहास।
× × ×

श्रम के प्रति कवि की अटूट आस्था का प्रतिफल— : श्रमवन्दन

'सूत्रधार में' जिस कवि ने कहा था कि "दिव्य सफलता है भूतल पर मानव-श्रम की दासी" उसकी कलम से ही 'श्रम-वन्दन' नाम का काव्यसंग्रह उत्पन्न हुआ। पूँजी क्या है? श्रम का जो फल उपभोग के बाद बचता है, वह पूँजी है। श्रम के फल का उपभोग सब लोग समान रूप से करने के अधिकारी बन जायं, इसके लिए आवश्यक है कि श्रम करने मे सब का समान विश्वास हो। पूँजी को गाली देने से श्रम-फल के समान उपभोग की स्थिति उत्पन्न नहीं हो जाती। श्रम-फल को उपभोग के बाद ही बचा लेना एक सफलता है, जो 'पूँजी' कही जाती है, लेकिन 'पूँजी' श्रम की स्वामिनी नहीं बन सकती। यदि वस्तुतः वह सफलता है और 'दिव्य' सफलता है, तो उसे मानव-श्रम की दासी बनकर रहना पड़ेगा। यदि पूँजी श्रम की स्वामिनी बनकर रहना चाहती है, तो वह 'दिव्य' नहीं, 'अदिव्य' है, उसमें 'देवत्व का' नहीं, 'दनुजत्व का' तत्व विद्यमान है। दिव्य सफलता पाने के अभिलाषी मनुष्य के लिए 'श्रम' 'वन्दनीय' है। इस भावना के साथ ही नेहरू के प्रशंसक कवि ने श्रमवन्दन काव्य-संग्रह की रचना की है। वह कहता है—

> जो भी श्रम का बना पुजारी;
> जिसने किया हृदय से यत्न

श्रम के प्रति कवि की अटूट आस्था का प्रतिफल— ० श्रमवन्दन

'सूत्रधार में' जिस कवि ने कहा था कि "दिव्य सफलता है भूतल पर मानव-श्रम की दासी" उसकी कलम से ही 'श्रम-वन्दन' नाम का काव्यसंग्रह उत्पन्न हुआ। पूँजी क्या है? श्रम का जो फल उपभोग के बाद बचता है, वह पूँजी है। श्रम के फल का उपभोग सब लोग समान रूप से करने के अधिकारी बन जायं, इसके लिए आवश्यक है कि श्रम करने मे सब का समान विश्वास हो। पूँजी को गाली देने से श्रम-फल के समान उपभोग की स्थिति उत्पन्न नहीं हो जाती। श्रम-फल को उपभोग के बाद ही बचा लेना एक सफलता है, जो 'पूँजी' कही जाती है, लेकिन 'पूँजी' श्रम की स्वामिनी नहीं बन सकती। यदि वस्तुतः वह सफलता है और 'दिव्य' सफलता है, तो उसे मानव-श्रम की दासी बनकर रहना पड़ेगा। यदि पूँजी श्रम की स्वामिनी बनकर रहना चाहती है, तो वह 'दिव्य' नहीं, 'अदिव्य' है, उसमे 'देवत्व का' नहीं, 'दनुजत्व का' तत्व विद्यमान है। दिव्य सफलता पाने के अभिलाषी मनुष्य के लिए 'श्रम' 'वन्दनीय' है। इस भावना के साथ ही नेहरू के प्रशंसक कवि ने श्रमवन्दन काव्य-संग्रह की रचना की है। वह कहता है—

> जो भी श्रम का बना पुजारी;
> जिसने किया हृदय से यत्न

रौरव के ताण्डव नर्तन से
जीवन के इस परिवर्तन से
संहार या कि इस सर्जन से
बोझिल हो जाये हृदय, किन्तु
साहस के दो डग बढ़े रहें।

क्योंकि—

जो कभी न रुक पाये डर से
वह जीत जीतकर लायेगा, पर
साहस के दो डग बढ़े रहें।

कवि श्रमिक का ध्यान नदी की 'धारा की' ओर खींचता है। नदी नहीं जानती कि उसका अन्तिम लक्ष्य क्या है। सागर में वह मिलती है, किन्तु केवल अस्तित्व खो देने के लिए। सागर में मिलकर खो जाना, अपने को मिटा डालना कोई लक्ष्य नहीं हो सकता, लेकिन तो भी क्या नदी 'प्रवाह का श्रम' त्याग देती है? क्या वह विश्व के प्रति उपकारी वृत्ति को छोड़ती है? पत्थर के घेरों से टकराने का श्रम एक जैसा चलता है, पृथ्वी की लम्बाई मापने का श्रम एक जैसा चलता है। यदा-कदा नदी को फूल और दीप की पूजा भी मिलती है, लेकिन अधिक लोग उसकी छाती का उपयोग अपने यान दौड़ाने के लिए करते हैं। वह न यदा-कदा की पूजा से भ्रम मे पड़ती है और न यानों के चाप से घबड़ाती है। सबके लिए उपकारी वृत्ति से वह अनवरत श्रम करती जाती है। 'धारा मे' कवि कहता है—

रौरव के ताण्डव नर्तन से
जीवन के इस परिवर्तन से
संहार या कि इस सर्जन से
बोझिल हो जाये हृदय, किन्तु
साहस के दो डग बढ़े रहें।
क्योंकि—
जो कभी न रुक पाये डर से
वह जीत जीतकर लायेगा, पर
साहस के दो डग बढ़े रहें।

कवि श्रमिक का ध्यान नदी की 'धारा की' ओर खींचता है। नदी नहीं जानती कि उसका अन्तिम लक्ष्य क्या है। सागर में वह मिलती है, किन्तु केवल अस्तित्व खो देने के लिए। सागर में मिलकर खो जाना, अपने को मिटा डालना कोई लक्ष्य नहीं हो सकता, लेकिन तो भी क्या नदी 'प्रवाह का श्रम' त्याग देती है? क्या वह विश्व के प्रति उपकारी वृत्ति को छोड़ती है? पत्थर के घेरों से टकराने का श्रम एक जैसा चलता है, पृथ्वी की लम्बाई मापने का श्रम एक जैसा चलता है। यदा-कदा नदी को फूल और दीप की पूजा भी मिलती है, लेकिन अधिक लोग उसकी छाती का उपयोग अपने यान दौड़ाने के लिए करते हैं। वह न यदा-कदा की पूजा से भ्रम मे पड़ती है और न यानों के चाप से घबड़ाती है। सबके लिए उपकारी वृत्ति से वह अनवरत श्रम करती जाती है। 'धारा मे' कवि कहता है—

सम्भव है, जब 'समताका' भाव जगे ; 'वैषम्य' छूट जाय। कवि कहता है—

आज मानव-रक्त की है
दानवों मे प्यास जागी
बन रही सन्तान मनु की
द्वेष-ईर्ष्या से अभागी
× × ×
चाह है 'वैषम्य' छूटे
प्रीति मे जग मुस्कराये
स्नेह से अभिसिक्त नूतन
रूप मानव–सृष्टि पाये

वैषम्य किस प्रकार छूटे ? 'प्रीति कैसे संसार मे मुस्कराये ? मनुष्य की दुनिया स्नेह से अभिसिक्त कैसे हो ? इन सब प्रश्नों का एक मात्र उत्तर यही है कि श्रम के प्रति मनुष्य मे आदर का भाव जगे, पूजा का भाव जगे और जो श्रम करते है, वे 'निश्चय' करे कि उन्हें नये संसार की रचना करनी है। 'निश्चय मे' कवि कहता है—

मैं मानव, मिट्टी का प्राणी
अपना पथ खुद गढ़ता हूं
घोर तिमिर का वक्ष चीरकर
दीप्त किरण-सा कढ़ता हूं

सम्भव है, जब 'समताका' भाव जगे ; 'वैषम्य' छूट जाय। कवि कहता है—

आज मानव-रक्त की है
दानवों मे प्यास जागी
बन रही सन्तान मनु की
द्वेष-ईर्ष्या से अभागी

× × ×

चाह है 'वैषम्य' छूटे
प्रीति मे जग मुस्कराये
स्नेह से अभिसिक्त नूतन
रूप मानव—सृष्टि पाये

वैषम्य किस प्रकार छूटे ? 'प्रीति कैसे संसार मे मुस्कराये ? मनुष्य की दुनिया स्नेह से अभिसिक्त कैसे हो ? इन सब प्रश्नो एक मात्र उत्तर यही है कि श्रम के प्रति मनुष्य मे आदर का भाव जगे, पूजा का भाव जगे और जो श्रम करते है, वे 'निश्चय' करें कि उन्हें नये संसार की रचना करनी है। 'निश्चय मे' कवि कहता है—

मै मानव, मिट्टी का प्राणी
अपना पथ खुद गढ़ता हूं
घोर तिमिर का वक्ष चीरकर
दीप्त किरण-सा कढ़ता हूं

जैसा कि 'मृत्युञ्जयीकी' भूमिका पढ़ने से स्पष्ट है, कवि गांधी के प्रति केवल इसलिए श्रद्धावान नहीं कि उन्होंने हृदय की महत्ता स्थापित करने का प्रयत्न किया अथवा हृदय-परिवर्त्तन पर बल दिया, वरन् सबसे अधिक इसलिए श्रद्धावान है कि उन्होंने आधुनिक भारत के सामने हृदय परिवर्त्तन का एक व्यावहारिक लक्ष्य रखा। कवि गाधी की इस विशिष्टता का विशेष प्रशंसक है कि उनके लिए राजनीतिक आजादी की लड़ाई में विजय पाना अन्तिम लक्ष्य नहीं था, वरन् यह सामान्य जनों का युग आरम्भ करने का प्रथम सोपान मात्र था। एक ऐसे कवि का, जो व्यक्तिगत जीवन में सामान्य वर्ग का व्यक्ति नहीं, जिसमे सामान्य जनो के प्रति अनुराग होने की कोई खास वजह नहीं है, गांधी के प्रति इसलिए श्रद्धावान होना कि उन्होंने 'सामान्य जनों' के युग का सूत्रपात किया, उसकी ऐसी विशेषता प्रकट करता है, जो आज के धनवानों में—खास तौर पर युवक धनवानों में अत्यन्त कम पायी जाती है। 'मृत्युञ्जयीका' कवि गाधी के प्रति अपनी श्रद्धा का कारण बताते हुए उन्हें ही सम्बोधित करते हुए कहता है—

तुम निष्ठुरता की वेदी पर
नव करुणा के अवतार रहे
तुम द्वेष-दम्भ की छाती पर
मृदु मानवता के प्यार रहे

'मृत्युञ्जयी का' कवि मानता है कि जब शक्ति-संपन्न लोग

जैसा कि 'मृत्युञ्जयीकी' भूमिका पढ़ने से स्पष्ट है, कवि गांधी के प्रति केवल इसलिए श्रद्धावान नहीं कि उन्होंने हृदय की महत्ता स्थापित करने का प्रयत्न किया अथवा हृदय-परिवर्त्तन पर बल दिया, वरन् सबसे अधिक इसलिए श्रद्धावान है कि उन्होंने आधुनिक भारत के सामने हृदय परिवर्त्तन का एक व्यावहारिक लक्ष्य रखा। कवि गाधी की इस विशिष्टता का विशेष प्रशंसक है कि उनके लिए राजनीतिक आजादी की लड़ाई में विजय पाना अन्तिम लक्ष्य नहीं था, वरन् यह सामान्य जनों का युग आरम्भ करने का प्रथम सोपान मात्र था। एक ऐसे कवि का, जो व्यक्तिगत जीवन में सामान्य वर्ग का व्यक्ति नहीं, जिसमे सामान्य जनो के प्रति अनुराग होने की कोई खास वजह नहीं है, गांधी के प्रति इसलिए श्रद्धावान होना कि उन्होंने 'सामान्य जनों' के युग का सूत्रपात किया, उसकी ऐसी विशेषता प्रकट करता है, जो आज के धनवानों में—खास तौर पर युवक धनवानों में अत्यन्त कम पायी जाती है। 'मृत्युञ्जयीका' कवि गाधी के प्रति अपनी श्रद्धा का कारण बताते हुए उन्हें ही सम्बोधित करते हुए कहता है—

तुम निष्ठुरता की वेदी पर
नव करुणा के अवतार रहे
तुम द्वेष-दम्भ की छाती पर
मृदु मानवता के प्यार रहे

'मृत्युञ्जयी का' कवि मानता है कि जब शक्ति-संपन्न लोग

एक विशाल साम्राज्य की हिंसा-शक्ति को पराजित होने के लिए विवश कर दिया। कवि कहता है—

जब सत्य-अहिंसा गान सुना
उद्बोधन का था भोर हुआ
भारत के मधुमय प्रांगण मे
था 'मुक्तिमन्त्रका' शोर हुआ
जग उठे बाल, जगते वृद्धे
जगता यौवन भी ले उफान
बढ़ खड़ी आर्य सब ललनाएँ
देने को मां-हित प्राणदान

जिस घनश्याम को पुकारते हुए कवि ने 'संवेगकी' कविताएँ लिखी हैं, उनका ही दर्शन कवि को गांधी मे हुआ। बहुत से लोगों को कवि के इस भाव में उसकी अत्यधिक भावुकता नजर आ सकती है, लेकिन वह स्वयं भावुकता को कोई अपराध नहीं मानता; उसे कोई दोप नहीं मानता। उसकी दृष्टि मे सबसे बड़ा दोप एवं दोप से भी अधिक अपराध है हृदयहीनता, जिससे लोहा लेने के लिए वह कलम चलाता है दिन में और बहुधा रात में भी। वह कहता है—

जिस तरह द्रौपदी भरी सभा
मे रोयी थी, चिल्लायी थी
जिस तरह 'बांसुरी' वाले ने
खुद उसकी लाज बचायी थी

एक विशाल साम्राज्य की हिंसा-शक्ति को पराजित होने के लिए विवश कर दिया। कवि कहता है—

जब सत्य-अहिंसा गान सुना
उद्बोधन का था भोर हुआ
भारत के मधुमय प्रांगण में
था 'मुक्तिमन्त्रका' शोर हुआ
जग उठे बाल, जगते बूढ़े
जगता यौवन भी ले उफान
बढ़ खड़ी आर्य सब ललनाएं
देने को मां-हित प्राणदान

जिस घनश्याम को पुकारते हुए कवि ने 'संवेगकी' कविताएँ लिखी हैं, उनका ही दर्शन कवि को गांधी मे हुआ। बहुत से लोगों को कवि के इस भाव में उसकी अत्यधिक भावुकता नजर आ सकती है, लेकिन वह स्वयं भावुकता को कोई अपराध नहीं मानता; उसे कोई दोष नहीं मानता। उसकी दृष्टि मे सबसे बड़ा दोष एवं दोष से भी अधिक अपराध है हृदयहीनता, जिससे लोहा लेने के लिए वह कलम चलाता है दिन में और बहुधा रात में भी। वह कहता है—

जिस तरह द्रौपदी भरी सभा
मे रोयी थी, चिल्लायी थी
जिस तरह 'बांसुरी' वाले ने
खुद उसकी लाज बचायी थी

ऋतु परिवर्तन के प्रति कवि की आशादीप्त प्रतिक्रिया : झलक

'कल्लोल में' प्रकृति के प्रति कवि का जो सीमित आकर्षण व्यक्त हुआ था, उसने 'संदीप्ति' तक पहुँचते-पहुँचते व्यापक रूप ग्रहण किया। उस आकर्षण ने जब और व्यापक रूप ग्रहण किया. तब कवि को प्रकृति की प्रत्येक क्रिया आकृष्ट करनेवाली जंचने लगी। प्रकृति की इन क्रियाओं में ही एक है ऋतुपरिवर्तन।

ऋतुपरिवर्तन ने कवि को आकृष्ट किया, क्योंकि उससे प्रेरणा यह मिलती है कि निराशा या नाश अन्तिम सत्य नहीं। निराशा के क्षणों में भी किसी ओर से आशा की किरण फूटने की सम्भावना बनी रहती है। नाश के बाद निर्माण की सम्भावना बनी रहती है। ऋतुपरिवर्तन में प्रकृति का जो यह सन्देश 'झलकता' मिलता है, उसे ही व्यक्त करना उन कविताओं का उद्देश्य प्रतीत होता है, जो काव्यसंग्रह 'झलक में' संग्रहीत हैं।

कवि ने इस मान्यता के साथ ही काव्य-लेखन आरम्भ किया था कि आज का मनुष्य अपने ही द्वारा खड़ी विभीपिकाओं की आग मे जल रहा है। मनुष्य की उस जलन से ग्रीष्म ऋतु की जलन का जो साम्य हो सकता है, उसने 'झलक के' कवि को ग्रीष्म के वर्णन से ही इस पुस्तक को आरम्भ करने की प्रेरणा दी है। गर्मी का दिन आ गया है। दिन काटना

ऋतु परिवर्तन के प्रति कवि की आशादीप्त प्रतिक्रिया : झलक

'कल्लोल में' प्रकृति के प्रति कवि का जो सीमित आकर्षण व्यक्त हुआ था, उसने 'संदीप्ति' तक पहुँचते-पहुँचते व्यापक रूप ग्रहण किया। उस आकर्षण ने जब और व्यापक रूप ग्रहण किया, तब कवि को प्रकृति की प्रत्येक क्रिया आकृष्ट करनेवाली जंचने लगी। प्रकृति की इन क्रियाओं में ही एक है ऋतुपरिवर्तन।

ऋतुपरिवर्तन ने कवि को आकृष्ट किया, क्योंकि उससे प्रेरणा यह मिलती है कि निराशा या नाश अन्तिम सत्य नहीं। निराशा के क्षणों में भी किसी ओर से आशा की किरण फूटने की सम्भावना बनी रहती है। नाश के बाद निर्माण की सम्भावना बनी रहती है। ऋतुपरिवर्तन में प्रकृति का जो यह सन्देश 'झलकता' मिलता है, उसे ही व्यक्त करना उन कविताओं का उद्देश्य प्रतीत होता है, जो काव्यसंग्रह 'झलक में' संग्रहीत हैं।

कवि ने इस मान्यता के साथ ही काव्य-लेखन आरम्भ किया था कि आज का मनुष्य अपने ही द्वारा खड़ी विभी-षिकाओं की आग मे जल रहा है। मनुष्य की उस जलन से ग्रीष्म ऋतु की जलन का जो साम्य हो सकता है, उसने 'झलक के' कवि को ग्रीष्म के वर्णन से ही इस पुस्तक को आरम्भ करने की प्रेरणा दी है। गर्मी का दिन आ गया है। दिन काटना

यह वातावरण भी स्थायी नहीं रहनेवाला है एवं न इसके सब पहलू चमकीले ही चमकीले हैं। वर्षा के आगमन से जो प्रसन्नता बिखर पड़ी है, वह भारी विषाद में परिवर्तित हो सकती है। वर्षा की बून्दें जलप्लावन ला सकती हैं। चारों ओर क्रन्दन सुनायी दे सकता है। तो भी क्या मनुष्य को निराश होना चाहिए? नहीं, कदापि नहीं, क्योंकि जिस प्रकार ग्रीष्म के ताप से मुक्ति दिलाने के लिए वर्षा आ पहुँची, उसी प्रकार जलप्लावन से पीड़ित जीवों को सान्त्वना देने के लिए शरद ऋतु का आगमन होगा। कवि कहता है—

अम्बर के घन काले-काले
गये हवा के संग मतवाले
शेष रहा नीला-नीला नभ
शरद 'वरद' मन भाया

× × ×

जागी नयी चेतना उर में

शरद ने हृदय में नयी चेतना तो जगा दी, हेमन्त उस चेतना को कुन्द भी नहीं करेगा, लेकिन क्या वह सदा टिक सकती है? नहीं टिक सकती, क्योंकि संसार परिवर्तनशील है। केवल आशा के बाद निराशा और निराशा के बाद आशा के आने का क्रम अपरिवर्तनशील है। इस अपरिवर्तनशील नियम मे ही 'झलकके' कवि को आज के पीड़ित मनुष्य के लिए आशा की किरणें फूटती नजर आती है। यदि आशा स्थायी नहीं, तो निराशा भी स्थायी

यह वातावरण भी स्थायी नहीं रहनेवाला है एवं न इसके सब पहलू चमकीले ही चमकीले हैं। वर्षा के आगमन से जो प्रसन्नता बिखर पड़ी है, वह भारी विषाद में परिवर्तित हो सकती है। वर्षा की बून्दें जलप्लावन ला सकती हैं। चारों ओर क्रन्दन सुनायी दे सकता है। तो भी क्या मनुष्य को निराश होना चाहिए? नहीं, कदापि नहीं, क्योंकि जिस प्रकार ग्रीष्म के ताप से मुक्ति दिलाने के लिए वर्षा आ पहुँची, उसी प्रकार जलप्लावन से पीड़ित जीवों को सान्त्वना देने के लिए शरद् ऋतु का आगमन होगा। कवि कहता है—

अम्बर के घन काले-काले
गये हवा के संग मतवाले
शेष रहा नीला-नीला नभ
शरद् 'वरद' मन भाया

× × ×

जागी नयी चेतना उर में

शरद् ने हृदय में नयी चेतना तो जगा दी, हेमन्त उस चेतना को कुन्द भी नहीं करेगा, लेकिन क्या वह सदा टिक सकती है? नहीं टिक सकती, क्योंकि संसार परिवर्तनशील है। केवल आशा के बाद निराशा और निराशा के बाद आशा के आने का क्रम अपरिवर्तनशील है। उस अपरिवर्तनशील नियम में ही 'झलकके' कवि को आज के पीड़ित मनुष्य के लिए आशा की किरणें फूटती नजर आती है। यदि आशा स्थायी नहीं, तो निराशा भी स्थायी

है कि ऋतुओं का परिवर्तन होते-होते वसन्त का जो आगमन हुआ है, उसे केवल आंख ही देखकर नहीं रह जायं, वरन उस परिवर्तन में जो प्रकाश-किरणें फूट रही हैं, वे आंखों के द्वार से हृदय तक पहुँचें, हृदय को भी आलोकित करें। वह कहता है—

दृग के मग अन्तर मे उतरीं
किरणें शोभाशाली
विहँस रही है मुग्धा जैसी
नव वसन्त की लाली

गीता के ज्ञान के प्रति कवि की आस्था की प्रतिक्रिया • प्रेरणा

'स्वरालोक' में कवि ने 'निदाघ की दोपहरी' शीर्षकवाले गीत में लिखा था –

सूखी गगरी, सूखा पनघट
उजड़ गया फूलों का जमघट
उतरो नभ से 'श्याम सलोने'!
लाओ जीवन की लहरी

राधा के 'सलोने श्यामने' ही उन लोगो के लिए, जो भक्ति की नाव पर बैठकर नहीं, वरन तर्कों की नदी मे तैरकर परम सत्ता तक पहुँचने का निश्चय करते हे, गीता का ज्ञान दिया था। 'स्वरालोक' यदि राधा के प्रति श्याम सलोने के हृदय से निकले गीतों से गूंज रहा है, तो 'प्रेरणा मे' उनके ही उस यश की गाथा है, जो गीता-ज्ञान देकर उन्होंने सब लोकों मे फैलायी।

है कि ऋतुओं का परिवर्तन होते-होते वसन्त का जो आगमन हुआ है, उसे केवल आंखे ही देखकर नहीं रह जायं, वरन उस परिवर्तन में जो प्रकाश-किरणें फूट रही हैं, वे आंखों के द्वार से हृदय तक पहुँचें, हृदय को भी आलोकित करें। वह कहता है—

दृग के मग अन्तर मे उतरीं
किरणें शोभाशाली
विहँस रही है मुग्धा जैसी
नव वसन्त की लाली

गीता के ज्ञान के प्रति कवि की आस्था की प्रतिक्रिया • प्रेरणा

'स्वरालोक' में कवि ने 'निदाघ की दोपहरी' शीर्षकवाले गीत में लिखा था –

सूखी गगरी, सूखा पनघट
उजड़ गया फूलों का जमघट
उतरो नभ से 'श्याम सलोने'!
लाओ जीवन की लहरी

राधा के 'सलोने श्यामने' ही उन लोगो के लिए, जो भक्ति की नाव पर बैठकर नहीं, वरन तर्कों की नदी मे तैरकर परम सत्ता तक पहुँचने का निश्चय करते हैं, गीता का ज्ञान दिया था। 'स्वरालोक' यदि राधा के प्रति श्याम सलोने के हृदय से निकले गीतों से गूँज रहा है, तो 'प्रेरणा मे' उनके ही उस यश की गाथा है, जो गीता-ज्ञान देकर उन्होंने सब लोकों मे फैलायी।

अर्जुन थे शरणागत, केशव
गुरु-पद पर आसीन रहे
भक्ति-भाव से हृदय भरा था
सभी तरह से दीन रहे

'प्रेरणाकी' खोज में भटकते युवक को मुसाफिर से जो पहली शिक्षा मिलती है, वह यही है कि यदि परम सत्ता तक पहुँचना चाहते हो, तो सम्पूर्ण आत्मसमर्पण करो, तभी भक्ति का माध्यम उपयोगी होगा अथवा ज्ञान का। जब तक अहंकार बना है, तब तक न तो भक्ति सम्भव है, न ज्ञान। परम सत्ता तक पहुँचने का मार्ग चाहे रागात्मक हो, चाहे अरागात्मक, अहंकार दोनों ही मार्गों मे खड़ा होकर प्रगति में बाधक बन जाता है। अहंकार के नष्ट होते ही—

पात्र सुघर जब बन जायेगा
कुछ भी देर नहीं होगी
महानन्द जब भर जायेगा
कुछ भी देर नहीं होगी

× × ×

मन की सारी चञ्चलता खुद
अपने वश मे आयेगी
रुग्ण हृदय मे अनायास ही
दिव्य छटा मुस्कायेगी

अर्जुन थे शरणागत, केशव
गुरु-पद पर आसीन रहे
भक्ति-भाव से हृदय भरा था
सभी तरह से दीन रहे

'प्रेरणाकी' खोज में भटकते युवक को मुसाफिर से जो पहली शिक्षा मिलती है, वह यही है कि यदि परम सत्ता तक पहुँचना चाहते हो, तो सम्पूर्ण आत्मसमर्पण करो, तभी भक्ति का माध्यम उपयोगी होगा अथवा ज्ञान का। जब तक अहंकार बना है, तब तक न तो भक्ति सम्भव है, न ज्ञान। परम सत्ता तक पहुँचने का मार्ग चाहे रागात्मक हो, चाहे अरागात्मक, अहंकार दोनों ही मार्गों मे खड़ा होकर प्रगति में बाधक बन जाता है। अहंकार के नष्ट होते ही—

पात्र सुघर जब बन जायेगा
कुछ भी देर नहीं होगी
महानन्द जब भर जायेगा
कुछ भी देर नहीं होगी

× × ×

मन की सारी चञ्चलता खुद
अपने वश मे आयेगी
क्षण हृदय मे अनायास ही
दिव्य छटा मुस्कायेगी

देखकर किसी भी कवि को 'महाभारत'-कालीन अवस्था का स्मरण हो आना स्वाभाविक है और उस अवस्था से त्राण पाने का जो मार्ग गीता के ज्ञान के रूप में प्रकट हुआ, उसकी ओर भी कोई विचारशील कवि आकृष्ट हुए बिना नहीं रह सकता। 'महाभारत'-कालीन लोगों की मानसिक अवस्था का वर्णन करते हुए कवि कहता है—

बहुत लोग थे दोनों दल में
जिनको मोह सताये था
बहुत लोग थे ऐसे, जिनको
भीषण द्रोह सताये था।

उस अवस्था में भी भगवान ने केवल अर्जुन को विजयी होने के लिए चुना। केवल अर्जुन उस अवस्था पर विजय पाने में समर्थ हुए। कवि चाहता है कि लोग सोचें कि केवल अर्जुन ही उस अवस्था पर क्यों विजयी हुए। वह पूछता है—

आखिर क्यों, सोचा है इसपर?
इसे जानना चाहा है?
कैसा गहरा यह रहस्य है
इसे कभी क्या थाहा है?

देखकर किसी भी कवि को 'महाभारत'-कालीन अवस्था का स्मरण हो आना स्वाभाविक है और उस अवस्था से त्राण पाने का जो मार्ग गीता के ज्ञान के रूप में प्रकट हुआ, उसकी ओर भी कोई विचारशील कवि आकृष्ट हुए बिना नहीं रह सकता। 'महाभारत'-कालीन लोगों की मानसिक अवस्था का वर्णन करते हुए कवि कहता है—

बहुत लोग थे दोनों दल में
जिनको मोह सताये था
बहुत लोग थे ऐसे, जिनको
भीषण द्रोह सताये था।

उस अवस्था में भी भगवान ने केवल अर्जुन को विजयी होने के लिए चुना। केवल अर्जुन उस अवस्था पर विजय पाने में समर्थ हुए। कवि चाहता है कि लोग सोचें कि केवल अर्जुन ही उस अवस्था पर क्यों विजयी हुए। वह पूछता है—

आखिर क्यों, सोचा है इसपर ?
इसे जानना चाहा है ?
कैसा गहरा यह रहस्य है
इसे कभी क्या थाहा है ?